International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(2): 01-03

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(2): 01-03
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 01-01-2021
Accepted: 03-02-2021

Dr. Smita Talwar
Department of Home Science,
GD Government College, Alwar,
Rajasthan, India

Corresponding Author:
Dr. Smita Talwar
Department of Home Science,
GD Government College, Alwar,
Rajasthan, India

प्राचीन ग्रन्थों में आरोग्य अवधारणा

Dr. Smita Talwar

प्रस्तावना

मनुष्य के सभी कार्यों का आधार शरीर है, अत: सर्वप्रथम शरीर का स्वस्थ रहना आवश्यक है। कहा भी गया है- पहला सुख निरोगी काया। आरोग्य का पर्यायवाची है-स्वास्थ्य-यह शब्द स्व एवं अवस्था से मिलकर बना है अर्थात् स्व में स्थित रहना ही स्वास्थ्य (health) है। अरबी में एक कहावत है- He who has health has hope; and he who has hope has everything.

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार- Health is a state of complete physical, mental and social well-being, and not merely an absence of disease or infirmity. A fourth dimension has also been suggested namely spiritual health.

सुश्रुत संहिता में स्वस्थ व्यक्ति की परिभाषा इतनी सटीक एवं युक्तियुक्त दी गई है जो विश्व के किसी चिकित्सा-शास्त्र में नहीं है-

समदोष समाग्निश्च समधातुमलक्रिय:।
प्रसन्नात्मोन्द्रियमना: स्वस्थ इत्यभिधीयते।। [1]

अर्थात् जिस व्यक्ति के शरीर में तीनों दोष (वात, पित, कफ) साम्यावस्था में हों, पंचमहाभूतों (अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु, आकाश) की सातों धातुओं (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र) की सात और तेरहवीं जठर की अग्नि ये अग्नियां समान हों, रस आदि सातों धातु पुष्ठ व समान हो मलमूत्र विसर्जन क्रिया ठीक हो, आत्मा, इन्द्रियां व मन प्रसन्न अवस्था में हो उसी व्यक्ति को स्वस्थ कहा जा सकता है। अर्थात् दोषों का विषम हो जाना रोग है और इनका साम्यावस्था में होना आरोग्य अर्थात् स्वास्थ्य है।

महर्षि सुश्रुत की यह परिभाषा स्वास्थ्य को त्रिआयामी कसौटियों पर कसती है- शारीरिक, मानसिक और आत्मिक-इन तीनों स्तरों पर सम्यक् हुए बिना किसी को भी स्वस्थ नही कहा जा सकता। महर्षि कश्यप ने भी काश्यपसंहिता में आरोग्य के लक्षण इस प्रकार उदधृत किये हैं जो महर्षि सुश्रुत की स्वस्थ मनुष्य की परिभाषा से मेल रखती है-

भवन्ति चात्र

आरोग्यं दोषसमता सर्वाबाधनिवर्तनम्।
तदर्थमृषय: पुण्यमायुर्वेदमधीयते।। [2]

दोषों का समावस्था में होना तथा सर्वविध रोगों की निवृति 'आरोग्य' कहलाता है। इस आरोग्य के लिए ही ऋषि लोग पुण्य (पवित्र) आयुर्वेद का अध्ययन करते हैं।

रसायनानि विधिवत्तदर्थं चोपयुञ्जते।
धर्मार्थकाममोक्षाणामवाप्तिश्च तदाश्रया।। [3]
तदात्मवांस्तदर्थाय प्रयतेत विचक्षण:।

उस आरोग्य के लिए ही विधिवत् रसायनों का प्रयोग किया जाता है। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष आदि चतुर्विध पुरूषार्थ की प्राप्ति भी आरोग्य से ही होती है। चरकसंहिता के अनुसार- निर्बल पुरूष जहां भौतिक अर्थ एवं काम की प्राप्ति में असमर्थ रहता है, वहां वह धर्म तथा मोक्ष से भी वञ्चित रहता है। इसलिए बुद्धिमान् तथा आत्मवान् (जितेन्द्रिय मनुष्य) को आरोग्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

महर्षि कश्यप के अनुसार आरोग्य की परिभाषा इस प्रकार है-

अन्नाभिलाषो भुक्तस्य परिपाकः सुखेन च ।। [4]
सृष्टविण्मूत्रवातत्वं च सुखस्वप्नप्रबोधनम्।। [5]
बलवर्णायुषां लाभः सौमनस्यं समाग्निता ।
विद्यादारोग्यलिङ्गानि विपरीते विपर्ययम्।। [6]

अन्न में रूचि, खाए हुए अन्न का सुखपूर्वक परिपाक हो जाना, मल-मूत्र तथा वायु का निकलना, शरीर की लघुता, इन्द्रियों की प्रसन्नता, सुखपूर्वक सोना तथा जागना, बल, वर्ण तथा आयु की प्राप्ति, मन की प्रसन्नता तथा अग्नि की समता - ये आरोग्य के लक्षण हैं। अनारोग्य (अस्वस्थता) में इससे विपरीत लक्षण होते हैं।

यदि मानव जीवन को सफल बनाना है तो इसके लिए आयुवृद्धि और स्वास्थ्य रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहना आवश्यक है। शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्। [7] अर्थात् स्वस्थ शरीर के माध्यम से ही मनुष्य धर्म साधना में रत रह सकता है। धर्म का अनुष्ठान, अर्थोपार्जन, दिव्यकामना शिव-संकल्प से सन्तति-उत्पति तथा मोक्ष की सिद्धि-इन चतुर्विध पुरूषार्थों को सिद्ध करने के लिए सर्वतोभावेन स्वस्थ होना परम आवश्यक है।

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यम्मूलमुत्तमम्। [8]
रोगस्तस्यापहर्तारः श्रेयसोजीवितस्य च।। [9]

किन्तु आज हम स्वास्थ्य के प्रति सजग नहीं है वैश्वीकरण के इस दौर में, प्रगति की होड, में, अन्धानुकरण की इस दौड़ में मनुष्य सुविधाभोगी जीवनशैली अपनाकर परिश्रम से दूर हो चला है जिसका दुष्परिणाम है- आधि एवं व्याधि की प्रबलता - शरीरं व्याधि मन्दिरम्। विश्व में प्रायः कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो जीवनभर पूर्णतः रोगमुक्त रहा हो। बडे-बडे लोगों को भी, महात्माओं को भी कभी कोई न कोई रोग हो जाता है। मनुष्य को शुभाशुभ कर्मों का फल भोगना ही पडता है-अवश्यमनुभोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्। अधिकांश रोग परिश्रमहीनता से भी समुत्पन्न होते हैं।

सुखमय जीवन का प्रथम सोपान स्वस्थ शरीर है किन्तु विज्ञान के इस युग में मानव भ्रमित हो गया है। उसने सुख तो चाहा परन्तु दुःख से बचना भूल गया, फलस्वरूप शरीर की उपेक्षा करता रहा। सुख तो ऐसे मनुष्य के लिए क्षणभंगुर हो गया और मनुष्य दुख अर्थात् रोगों (शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों) से ग्रस्त हो गया। आधुनिक युग की ही देन है- अनिद्रा, सिरदर्द, अस्थमा, अवसाद (डिप्रेशन), उच्चरक्तचाप, मोटापा, हृदयरोग, मधुमेह, अर्थराइटिस और जानलेवा एड्स व कैन्सर आदि। इन सबके लिए तनाव ही उत्तरदायी है।

इससे भी बड़ा कारण व्यक्ति की स्वाद लेने की प्रवृति, फास्टफूड का चलन इत्यादि है जिनसे उदर-रोगों में वृद्धि हुई है। संपूर्ण विश्व में विभिन्न पैथियों के चिकित्सक इन व्याधियों को समाप्त करने अथवा नियंत्रण में रखने के लिए अनेक अनुसंधान कर रहे हैं किन्तु न तो इन रोगों पर नियंत्रण पाया जा सका है न ही इन्हें समाप्त करने की दिशा में किसी प्रकार की सफलता मिली है, इसके विपरीत समय के साथ-साथ इनका विस्फोट और तीव्र होता जा रहा है। अतः जब तक रोग के कारण का निवारण नही होगा तब तक रोग समाप्त नहीं हो सकेगा। अतः शरीर के व्याधिग्रस्त होने पर पथ्य और औषध सेवन यथोचित रीति से करना चाहिये। कहते हैं ऋण शेष, अग्नि शेष और व्याधि शेष नहीं रहने देना चाहिये। क्योंकि शेष रहने से इनकी वृद्धि होती है यथा-

ऋणशेषं अग्निशेषं व्याधिशेषं तथैव च।
पुनः पुनः प्रवर्धन्ते तस्माच्छेषं न कारयेत्।। [10]

रोग अथवा व्याधि-

आचार्य सुश्रुत ने रोगों को चार भागों में बांटा है- आगन्तुक शारीरिक, मानसिक और स्वाभाविक। शस्त्रप्रहार आदि से होने वाले आघात आगन्तुक है। अन्न-पान आदि की विषमता से उत्पन्न रोग शारीरिक है। क्रोध, शोक, ईर्ष्या, द्वेष, काम, लोभ आदि से उत्पन्न रोग मानस रोग हैं। भूख, प्यास, निद्रा, बुढापा आदि स्वाभाविक रोग है। इन सब रोगों के आधार शरीर और मन है। शारीरिक रोगों को व्याधि और मानस रोगों को आधि कहते है। इस प्रकार आधि और व्याधि में सभी रोगों का संग्रह हो जाता है।

महर्षि चरक ने इस विषय पर विस्तृत विचार किया है। उनका मत है कि मानस रोग प्रज्ञापराध (बुद्धि के आदेशों की उपेक्षा) से उत्पन्न होते हैं। ईर्ष्या, शोक, भय, क्रोध, अहंकार और द्वेष आदि मन के विकार अर्थात् मानसिक रोग प्रज्ञापराध से उत्पन्न होते हैं। प्रज्ञापराध की परिभाषा महर्षि चरक ने दी है कि धी (बुद्धि) धृति (धैर्य) और स्मृति (स्मरणशक्ति) के भ्रष्ट हो जाने पर मनुष्य जब अशुभ कर्म करता है, तब सभी शारीरिक और मानसिक रोगों को प्रकुपित करने वाले कारणों को प्रज्ञापराध कहते हैं। प्रज्ञापराधो हि रोगो मूलकारणं॥

महर्षि चरक ने इस विषय में उपदेश दिया है कि जो सदा सुखी और स्वस्थ रहना चाहता है वह अपने आहार, आचार और अपनी चेष्टाओं पर पूर्ण नियंत्रण रखें।

मन की प्रसन्नता और स्वस्थता मनुष्य को निरोग रखती है और उसका दूषित होना रोगों का कारण है। अतएव मन्त्रायणी उपनिषद् में कहा गया है-मन ही मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण है। ऋग्वेद और यजुर्वेद का कथन है कि यदि पाप, रोग, व्याधि नष्ट करना है तो मन को शुद्ध रखना चाहिए।

यजुर्वेद के 6 मंत्रों में 'तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु अर्थात् मेरा मन शुभ विचारों वाला हो, यह प्रार्थना की गयी है और कहा गया है कि मन ही मनुष्य की समस्त क्रियाओं और चेष्टाओं को नियंत्रित करता है। संयमशील मन योग्य सारथी के तुल्य मनुष्य को ठीक मार्ग पर ले चलता है। यदि मन दूषित है तो शरीर भी दूषित और रोगग्रस्त होता है।

मन को ही ब्राह्मणग्रन्थों और उपनिषदों में ब्रह्मा, सम्राट, प्रजापति आदि कहा गया है। मन की शक्ति अपार है। मन की शक्ति से केवल हस्तस्पर्श के द्वारा रोगी को निरोग करने का ऋग्वेद में उल्लेख है। मनोबल में इतनी बड़ी शक्ति होती है कि वह बड़े-से-बड़े रोगों को भस्मसात् करके मनुष्य को पूर्ण निरोग बना सकता है। इसी पद्धति का आश्रय लेकर स्वसंकल्प-शक्ति नामक चिकित्सा पद्धति का आविष्कार हुआ है।

आरोग्य के प्रमुख घटक-

आरोग्य प्राप्ति हेतु तीन उपस्तभ महर्षि चरक द्वारा बताये गये हैं-

त्रयोपस्तभा आहारनिद्राब्रह्मचर्यमिति । [11] इस विषय का प्रतिपादन महर्षि वागभट् द्वारा भी किया गया है यथा आहारशयनाबह्मचर्यैर्युक्त्या प्रयोजितैः। शरीरं धार्यते नित्यमागारमिव धारणैः।। [12]

शरीर को स्थिर एवं स्वस्थ रखने के लिये ये तीन खभे :- आहार, निद्रा, ब्रह्मचर्य- अनिवार्य हैं यानि तीनों का उचित रूप से पालन और निर्वहन

स्वस्थ रहने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। तीनों उपस्तभों के विधिवत् प्रयोग करने से शरीर जीवनभर बल, कान्ति तथा पुष्टि से युक्त रहता है, किन्तु इस बीच में अहितकर आहार-विहारों का यदि सेवन किया जाता है, तो उक्त लाभ नहीं मिलते। युक्ति संगत आहार की वैज्ञानिक विधि अपनाए बिना संपूर्ण स्वास्थ्य की अभीप्सा बेमानी हैं। वस्तुत: आहार स्वयं में भैषज्य है। आहार विहार के विज्ञान को जान कर हम अनेक व्याधियों का निदान कर सकते हैं।

नित्यं हिताहारविहारसेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्त:।
दाता सम: सत्यपर: क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्यरोग:।
मतिर्वच:कर्मसुखानुबन्धं सत्वं विधेयं विशदा च बुद्धि:।
ज्ञानं तपस्तत्परता च योगे यस्यास्ति तं नानुपतन्ति रोगा:।।

अर्थात् नित्य हितकारी आहार-विहार का सेवन करनेवाला काम-क्रोधादि विषयों में आसक्त न रहने वाला, दान देने वाला हानि-लाभ में सम रहनेवाला सत्यपरायण, क्षमावान, सहनशील और आप्त पुरुषों की सेवा करनेवाला मनुष्य रोगरहित रहता है। सुख देनेवाली मति सुखकारक वचन एवं कर्म अपने अधीन मन और शुद्ध तथा पापरहित बुद्धि जिनके पास है और जो ज्ञान प्राप्त करने तपस्या करने तथा योग सिद्ध करने में तत्पर रहते है उन्हे शारीरिक और मानसिक कोई भी रोग नही होता।

त्र्यायुषं जमदग्ने: कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम् ।। [13]

यजुर्वेदभाष्य का उक्त श्लोक त्रिगुण जीवन पर उल्लेखित है। इसका आशय यह है कि यदि मनुष्य शरीर के दृष्टिकोण से पूर्ण स्वस्थ है तो यह जीवन एक गुण है। इसके साथ मानस स्वास्थ्य के जुड़ जाने पर यह जीवन द्विगुण हो जाता है इसमें बौद्धिक तीव्रता को जोड़कर इसे हम त्रिगुणित कर लेते हैं। तमोगुण का अविकृत रूप स्वास्थ्य का साधक है तो रजोगुण का अविकृत रूप मानस प्रेम की उत्पति का सेतु बनता है और सत्वगुण बौद्धिक स्वास्थ्य को जन्म देता है। जिस जीवन में सत्व-रज-तम तीनों ठीक रूप में है, वही जीवन त्र्यायुष है।

यजुर्वेद की इस उद्घोषणा से यह प्रतीत होता है कि हमारे प्राचीन ऋषि-मनीषियों ने अपने तपोबल द्वारा ऐसी विधा का ज्ञान प्राप्त कर लिया था जिससे 300 वर्ष की स्वस्थ आयु प्राप्त हो सके। वर्तमान में भी देश-विदेश में दीर्घायु हेतु नित-नये शोध-अनुसंधान हो रहे हैं, तथा वैज्ञानिक इस दिशा में प्रयत्नशील हैं कि शरीर की सभी चयापचय क्रियाओं का नियमन सुचारू रूप से होता रहे तथा मनुष्य क वर्ष से भी अधिक शरीर का उपयोग कर पाये। इस हेतु शल्य क्रिया द्वारा अंग-प्रत्यारोपण, ग्राफटिंग, कॉस्मैटिक सर्जरी एवं बल तथा कांति प्रदान करने वाली औषधियां यथा- Neutraceuticals, Antioxidants, Functional foods आदि पर अनेकानेक प्रयोग स्वस्थ दीर्घ जीवन हेतु किये जा रहे हैं। इससे पहले कि कोई विदेशी हमारे ही ऋषियों के ज्ञान को नवीन रूप में प्रस्तुत कर पेटेण्ट करे, हमें अपने प्राचीन चिकित्सा ग्रन्थों को खंगालना होगा तथा दीर्घायु प्राप्ति हेतु उपाय खोजकर विश्व के सम्मुख प्रस्तुत कर, ऋषियों के तप से प्राप्त ज्ञान को सम्मान दिलाना होगा।

काम, क्रोध, ईर्ष्या, लोभ, मोह, अहंकार,
षड्रिपु ये जिनसे जीवन हुआ दुरूह दुश्वार,
षड्रिपु का करो त्याग,
सो मन के रोग जाएगें भाग
तो शरीर-रक्षण में लाग,
स्वास्थ्य के प्रति अब तो जाग,
पूर्ण हो सके धर्म का राग।

सदर्भ

1. सुश्रुत संहिता सू. स्थान 15.48
2. काश्यपसंहिता खिलस्थान 5.4
3. काश्यपसंहिता खिलस्थान 5.5
4. काश्यपसंहिता खिलस्थान 5.6
5. काश्यपसंहिता खिलस्थान 5.7
6. काश्यपसंहिता खिलस्थान 5.8
7. कुमारसंभवम पंचम सर्ग, 33
8. च. सू. क.क्ष
9. च. सू. क.क्ष
10. आरोग्य अंक
11. च. सू. क्क/फ्ब
12. अ.ह.सू. 7.52
13. पं. हरिशंकर सिद्धान्तालङ्कार, यजुर्वेदभाष्यम्, तृतीयोऽध्याय: (प्रथमोभाग:)